International Journal of Sanskrit Research 2024; 10(3): 08-11

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2024; 10(3): 08-11
© 2024 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 16-02-2024
Accepted: 19-03-2024

डॉ. नवीन शर्मा
सहायक-आचार्य, ज्योतिष विभाग, महर्षि वाल्मीकि संस्कृत विश्वविद्यालय, कैथल, हरियाणा, भारत

Corresponding Author:
डॉ. नवीन शर्मा
सहायक-आचार्य, ज्योतिष विभाग, महर्षि वाल्मीकि संस्कृत विश्वविद्यालय, कैथल, हरियाणा, भारत

भारतीय ज्ञान-परम्परा में ब्रह्मविद्या

डॉ. नवीन शर्मा

प्रस्तावना

अचिन्त्याव्यक्तरूपाय निर्गुणाय गुणात्मने ।
समस्त जगदाधार मूर्त्तये ब्रह्मणे नमः ।।[1]

ब्रह्म शब्द की व्युपत्ति वृह् धातु से होती है, जिसका अर्थ है बढ़ना, विस्तार को प्राप्त होना, प्रस्फुटित होना । विद्या – यथार्थ स्वरूप का ज्ञान ही विद्या है । अतः परं ब्रह्म का ज्ञान ही ब्रह्मविद्या है । शास्त्रों में कहा भी गया है कि जगत में उपाधि रहित निर्विकार रूप से जो सत्ता विद्यमान है, वह ब्रह्म है ।

ब्रह्म सर्वोच्च व सर्वव्यापक सत्ता है । ब्रह्म ही भगवान्, ईश्वर व परमेश्वर कहा जाता है । सच्चिदानन्द ही ब्रह्म का यथार्थ स्वरूप है । वेदों में ब्रह्म का सगुण एवं निर्गुण उभयात्मक वर्णन है। ब्रह्म की सत्ता का प्रमाण श्रुतियों और स्मृत्तियों में है । यह ब्रह्म शास्त्रों में अनेक रूप से परिभाषित है –

ऋग्वेद – प्रज्ञानं ब्रह्म ।
यजुर्वेद – अहं ब्रह्मास्मि ।
सामवेद – सर्वं खल्विदं ब्रह्म (तत्वमसि) ।
अथर्ववेद – अयमात्मा ब्रह्म ।
श्वेताश्वतरोपनिषत् – अणोरणीयान् महतो महीयान् । (अणु से भी अतीव सूक्ष्म और महान् से भी महान् है)
तैत्तिरीय उपनिषद् – सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म । (ब्रह्म सत्य, ज्ञान व अनन्त है)
श्रीमद्भागवद् – जन्माद्यस्य यतः (अर्थात् संसार की उद्भव, स्थिति व लय का हेतु)

वदन्ति तत्वभिदस्तत्वं संज्ञानमद्वयम् ।
ब्रह्मेति परमात्मेति भगवानिति शब्द्-यते ।।[2]

अर्थात् उस परमतत्व का नाम सत्य है । उस तत्व के अनेक नाम हैं, परन्तु वह तत्व है एक ही । भागवत्-पुराण के अनुसार उस परमतत्व को बहुधा ब्रह्म, परमात्मा और भगवान की संज्ञा से जाना जाता है ।

अमरकोष में उसी ब्रह्म के 20 नामों का वर्णन उपलब्ध होता है–

ब्रह्मऽऽत्मभूः सुरज्येष्ठः परमेष्ठी पितामहः ।
हिरण्यगर्भो लोकेशः स्वयम्भूश्चतुराननः ।।
धाताऽब्जयोनिर्द्रुहिणो विरिञ्चिः कमलासनः ।
स्रष्टा प्रजापतिर्वेधा विधाता विश्वसृड् विधिः ।।[3]

अर्थात् ब्रह्म जी के 20 नाम हैं – ब्रह्मन्, आत्मभू, सुरज्येष्ठ, परमेष्ठिन्, पितामह, हिरण्यगर्भ, लोकेश, स्वयम्भू, चतुरानन, धातृ, अन्जयोनि, द्रुहिण, विरिञ्चि, कमलासन, स्रष्टृ, प्रजापति, वेधस, विधातृ, विश्वसृज और विधि ।
तैत्तिरीय आरण्यक में ब्रह्म के विषय में कहा गया है कि –

स ब्रह्मा स शिवः स हरिः सेन्द्रः सोऽक्षरः परमः स्वराट् ।[4]

अर्थात् वह ब्रह्म ही ब्रह्मा है, शिव है, हरि है, इन्द्र है, अक्षर है और परम है, वह अपने आप दीप्त अर्थात् प्रकाशित रहता है ।
तात्पर्य यह है कि विविध शास्त्रों में इस ब्रह्म के पर्यायवाची शब्दों का अधिकतर प्रयोग हुआ है । भाष्यकारों ने यह भी स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश, हिरण्यगर्भ, नारायण, विश्वकर्मा, आदिपुरुष इत्यादि देवाधि-देव साक्षात् ब्रह्म न होकर, ब्रह्म की व्यक्त शक्तियाँ हैं ।
तैत्तिरीय आरण्यक में –

तदेवाग्निस्तद्वायुस्तत् सूर्यस्तद् चन्द्रमाः ।[5]
तदेव शुक्रं तद्ब्रह्म तत् आपस्तत् प्रजापतिः ।।

अर्थात् वह ब्रह्म ही अग्नि है, वह परब्रह्म ही वायु, सूर्य, चन्द्र, शुक्र, जल व प्रजापति है।

अग्निर्मूर्धा चक्षुषी चन्द्रसूर्यौ
दिशः श्रोत्रे वाग् विवृताश्च वेदाः
वायुः प्राणो हृदयं विश्वमस्य
पद्भ्यां पृथिवी ह्येष सर्वभूतान्तरात्मा ।।

इस मन्त्र में परब्रह्म के निराकार स्वरूप का वर्णन किया गया है । उसी परब्रह्म का यह प्रत्यक्ष दिखाई देने वाला जगत् विराट रूप है। इन विराट स्वरूप परमेश्वर का अग्नि अर्थात् द्युलोक ही मानो मस्तक है, चन्द्रमा और सूर्य दोनों नेत्र हैं, समस्त दिशाएँ कान हैं, नाना छन्द और ऋचाओं के रूप में विस्तृत चारों वेद वाणी हैं, वायु प्राण है, सम्पूर्ण चराचर जगत हृदय है, पृथ्वी मानो उसके पैर हैं । ये ही परब्रह्म परमात्मा समस्त प्राणियों के अन्तर्यामी परमात्मा हैं ।

ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्वि सीमतः सुरुचो वेन आवः ।
स बुध्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः ।।[6]

अति प्राचीनकाल की जो कल्पना की जा सकती है, उससे भी अत्यन्त प्राचीनकाल से वह परब्रह्म अपने ही प्रकाश से प्रकाशित हो रहा है । जिस समय अन्य कोई भी पदार्थ उत्पन्न ही नहीं हुआ था, उस समय से स्वयं प्रकाशी ब्रह्म प्रकाशित हो रहा है । तात्पर्य यह है कि यह ब्रह्म स्वयं प्रकाशित है, प्रकाशित होने के लिए इसको किसी अन्य की सहायता नहीं लेनी पड़ती है ।
उत्तम प्रकाशमान (सुरूचः) सीमाओं से ही (सीमातः) ज्ञानी (वेनः) मनुष्य उसको देखता है ।
जिस प्रकार बादलों से छिपा हुआ सूर्य बादलों के चमकने वाले किनारों से ही जाना जाता है, उसी प्रकार सूर्य, चन्द्र आदि के पीछे रहकर सूर्यादि को चमकाने वाला यह देव इन ज्योति पिण्डों की चमकाहट से ही जाना जाता है । उस ब्रह्म को सूर्यादि प्रकाशित नहीं करते अपितु ब्रह्म के तेज से ही सूर्यादि प्रकाशित हो रहे हैं अर्थात् सूर्यादियों की सुप्रकाशित सीमाओं को देखने से और विचार करने से परमात्मा का ज्ञान होता है । सृष्टि में उसका कार्य देखने से ही उस परमात्मा का ज्ञान हो सकता है । उसके ज्ञान के लिए कोई दूसरा मार्ग नहीं है ।
यह परब्रह्म परमात्मा प्रत्यक्ष दिखता नहीं है, सृष्टि में उसका कार्य देखकर उसका अनुमान होता है । उपमाओं से भी उसका वर्णन किया जा सकता है, जैसे –

अस्य उपमाः बुध्या वि-स्थाः

अर्थात् इसके लिए उपमाएं आकाश में विशेष रीति से रहने वाले जो सूर्यादि ज्योति पिण्ड हैं, वे ही हैं । भाव यह है कि उस परमब्रह्म का यदि वर्णन करना हो तो वह सूर्य का भी सूर्य है । वह चन्द्रमा का भी चन्द्रमा है । सूर्य आदि की उपमा उसको देखकर उसके विषय में ज्ञान दिया जाता है अथवा मनुष्य सृष्टि में उसके कार्य देखकर उसके विषय में ज्ञान प्राप्त किया जाता है। सत् और असत् का आदि कारण वह ब्रह्म ही है ।

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् ।
स दाधार पृथिवीमुत द्यां कस्मै देवाय हविषा विधेम ।।[7]

हम किस देवता की पूजा करें ? अति प्राचीनकाल में स्वर्ण जैसे चमकने वाले पदार्थों को अपने गर्भ में धारण करने वाला था अर्थात् जिसके अन्दर प्रकाशमान अनेक गोले हैं ऐसा देव जो पहले से विद्यमान था, जो सम्पूर्ण भूतों का एकमात्र स्वामी है, उसी ने पृथ्वी और द्युलोक को धारण किया हुआ है उस एक देव की हम सब पूजा करें ।

(हिरण्यगर्भ – पूर्ण शुद्ध ज्ञान की शान्त अवस्था) हिरण्य के अन्दर अभिमान करने वाला चैतन्य ज्ञान ही उसका गर्भ है, जिसे हिरण्यगर्भ कहते हैं ।

प्रकृति, पुरुष और अदृष्टकाल ब्रह्म की अन्तर्लीन शक्तियाँ हैं ।

बृहदारण्यक उपनिषद् में ब्रह्म को गहनता से स्पष्ट किया गया है–

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ।।[8]

अर्थात् वह ब्रह्म अर्थात् परमात्मा सभी प्रकार से सर्वदा परिपूर्ण है। ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति से पहले भी और उत्पत्ति के बाद भी वह पूर्ण है अर्थात् एक पूर्ण से एक और पूर्ण उत्पन्न हुआ वह भी पूर्ण ही है । पूर्ण से पूर्ण निकलने के बाद भी जो शेष बचा हुआ है, वह भी पूर्ण ही है । यही ब्रह्म है । ब्रह्म ने ही अपनी व्यक्त शक्ति ब्रह्मा को पुष्कर में रचा यह वर्णन गोपथ ब्राह्मण में उपलब्ध होता है, जैसे –

ब्रह्म ह वै ब्रह्मणं पुष्करे ससृजे । स खलु ब्रह्मा सृष्टश्चिन्ताम् आपेदे । केनाहम् एकेनाक्षरेण सर्वांश्च कामान् सर्वांश्च लोकान् सर्वांश्च देवान् सर्वांश्च वेदान् सर्वांश्च यज्ञान् सर्वांश्च शब्दान् सर्वांश्च वृष्टीः सर्वाणि च भूतानि स्थावरजङ्गमान्यनुभवेयम् इति ।[9]
स ब्रह्मचर्यम् अचरत । स ओम् इत्येतद् अक्षरम् अपश्यत् त्रिवर्णं चतुर्मात्रं सर्वव्यापि इत्यादि ।

अर्थात् ब्रह्म ने ही ब्रह्मा जी को पुष्कर क्षेत्र में रचा ।

उत्पन्न होने पर उन ब्रह्म जी ने चिन्ता की, कि मैं कौन से एक अक्षर से सब कामों का, सभी लोकों का, सभी देवताओं का, सभी वेदों का, सभी यज्ञों का, सभी शब्दों का, सभी वृष्टियों का और स्थावर जङ्गम रूप सभी भूतों का अनुभव करूँ । तदनन्तर उसने ब्रह्मचर्य करा तब उन्होंने तीन वर्ण चार मात्रा वाले सर्वव्यापक ॐ इस अक्षर को देखा ।

इस ॐ अक्षर ज्ञान के उपरान्त ब्रह्म ने उपरोक्त सृष्टि को रचा ।

वैयाकरण भर्तृहरि ने शब्द को ब्रह्म माना है, उनके अनुसार –

अनादि निधनं ब्रह्म शब्दतत्वं यदक्षरम् ।
विवर्तते अर्थभावेन प्रक्रिया जगतो यतः ।[10]

अर्थात् ब्रह्म अनादि है, शब्दरूप है तथा उस शब्दरूप ब्रह्म से विवर्तरूप से इस जगत की उत्पत्ति होती है ।

कठोपनिषद् में भी इस शब्दब्रह्म का ज्ञान यमराज भक्त नचिकेता को देते हैं –

सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति तपांसि सर्वाणि च यद्वदन्ति ।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पदं सङ्ग्रहेण
ब्रवीम्योमित्येतत् ।।[11]

अर्थात् जिस परम पद या शब्द का सभी वेद महिमागान कहते हैं तथा सभी तपस्याएं जिसके विषय में बताती हैं, जिसकी इच्छा करते हुए मनुष्य ब्रह्मचर्य का आचरण करते हैं, उसे मैं (यम) तुम्हें (नचिकेता को) संक्षेप से बताता हूँ । हे नचिकेता ! वह परमपद् शब्दब्रह्म ॐ है ।

ऋग्वेद के नासदीय सूक्त, हिरण्यगर्भ सूक्त तथा शुक्ल यजुर्वेद के पुरूष सूक्त और अथर्ववेद के ब्रह्मविद्या सूक्तों में उस परमब्रह्म का गहनता से वर्णन किया गया है ।

निष्कर्ष रूप में यत् ब्रह्माण्डे तत् पिण्डे सिद्धान्त को आत्मसात करते हुए अहं ब्रह्मास्मि के रूप में जो ब्रह्म को जानने का प्रयास करते हुए अवगमन कर लेते हैं । वे ब्रह्म को ही प्राप्त हो जाते हैं । ब्रह्मैव सन् ब्रह्माप्येति[12] तैत्तिरीय आरण्यक के इस मन्त्र पाद से ब्रह्मज्ञान स्पष्ट होता है ।

ब्रह्मवित् आप्नोति परम् ।[13]
ब्रह्मवेद ब्रह्मैव भवति ।[14]

ब्रह्मवित् अर्थात् ब्रह्मवेता परब्रह्म में लीन हो जाता है । ब्रह्म को जानने वाला ब्रह्म ही हो जाता है ।

ब्रह्मसत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नापरः ।[15]

अर्थात् ब्रह्म ही सत्य है और जगत् मिथ्या है । जीव ही ब्रह्म है । अतः इस प्रकार जो ब्रह्म को जानते हैं उनके लिए जगत की प्रत्येक वस्तु में ब्रह्म विद्यमान है ।

मुण्डकोपनिषद् में कहा है कि –

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः ।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे ।।[16]

अर्थात् जीवनमुक्ति वह है जिसमें कारण कार्यरूप ब्रह्म का आत्मभाव से दर्शन कर लेने पर अहंकार रूप हृदय ग्रन्थि खुल जाती है, उसके सारे संशय नष्ट हो जाते हैं, प्रारब्ध के अतिरिक्त उसके सभी कर्म क्षीण हो जाते हैं ।
ब्रह्मसूत्र में –

ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमसः परमुच्यते ।
ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्वधिष्ठितम् ।।[17]

वह ब्रह्म ज्योतियों की भी ज्योति है, वह माया से अति परे कहा जाता है तथा वह परमात्मा बोध स्वरूप और जानने योग्य, तत्वज्ञान से प्राप्त होने वाला सबके हृदय में स्थित है । अतः हमें उस ब्रह्मतत्व को जानने हेतु पूर्ण प्रयासरत रहना चाहिए ।

सन्दर्भ

1. भागवतपुराण 01.02.11
2. अमरकोष प्रथमकाण्ड श्लो. सं. 16,17
3. तैत्तिरीय आरण्यक 10.11.02
4. तैत्तिरीय आरण्यक 10.01.02
5. अथर्ववेद चतुर्थ काण्ड सूक्त 01, मन्त्र सं. 01
6. अथर्ववेद चतुर्थ काण्ड सूक्त 01, मन्त्र सं. 07
7. शतपथ ब्राह्मण 14.07.04
8. गोपथ ब्राह्मण 01/16
9. वाक्यपदीय 01.01
10. कठोपनिषद् 01.02.15
11. तैत्तिरीय आरण्यक 02/02
12. तैत्तिरीय आरण्यक 08/01
13. तैत्तिरीय आरण्यक 08/01
14. ब्रह्मज्ञानावली माला 20
15. मुण्डकोपनिषद् 2.2.08
16. ब्रह्मसूत्र